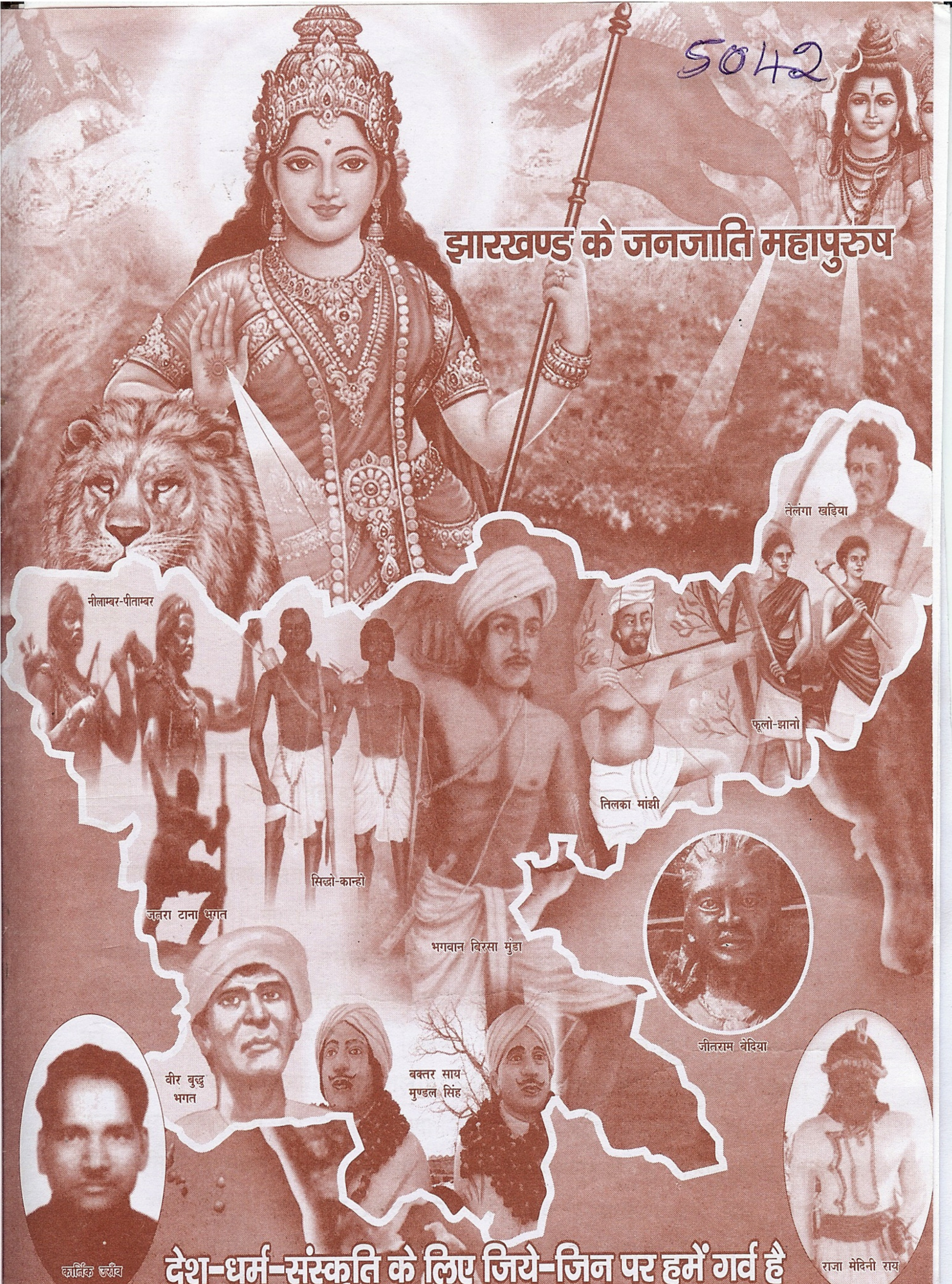




तू मैं एक रक्त

वनवासी कल्याण केन्द्र

झारखण्ड



बाला साहब देशपांडे
संस्थापक-वनवासी कल्याण आश्रम

Jharkhand Ke Janjati mahapurush

प्रस्तावना

भारत शौर्य पराक्रम से परिपूर्ण संत-महात्मा, ऋषि-मुनियों, देवी-देवताओं, वीर-वीरांगनाओं की पवित्र धर्म भूमि, कर्म भूमि, पूज्य भूमि एवं मोक्ष भूमि है। भारत के सपूतों ने हमेशा ध्यान में रखा है कि हमारी धर्म, संस्कृति, परम्पराएँ, संम्यता अक्षुण बना रहे। "इसको तोड़ने का लाखो प्रयास दुश्मन करे, लेकिन प्राणों से प्यारी भारत माता के अस्मिता, स्वाभिमान, शौर्य को लूटने एवं टूटने नहीं देगें। देश, समाज की रक्षा करते-करते प्राण चली जाय, लेकिन देश की पवित्र मान्यतों, मान-बिन्दुओं को कलंकित नहीं होने देगें।" ऐसा भाव निर्माण एवं चरित्र गठन करने वाला भारत देश है। दुनियाँ के तमाम अन्य देशों की परम्परागत पूर्वजों की संस्कृति नष्ट हो गई लेकिन भारत देश की सनातन हिन्दू संस्कृति अभी भी सैकडों वर्षो तक परम्परागत शक, हूण आक्रमण, हजारो वर्षों तक मुस्लिम आक्रमण एवं शासन, डेढ़ सौ वर्ष तक अंग्रेजों का दुष्चक्र एवं ब्रिटिश शासन तथा पाश्चात्य देशों से प्रभावित इस भौतिकता के चकाचौंध में भी कायम एवं सुरक्षित है। यह परम्परागत धरोहर हमारे पूर्वजों एवं वीर सपूतों की ही देन है।

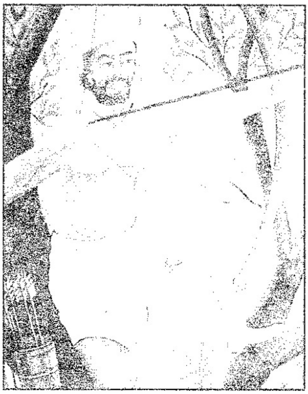
झारखण्ड शहीदों, क्रांतिकारियों, वीर-वीरांगनाओं की धरती है। जिस प्रकार इसका परिवेश जंगल, पहाड़ों, नदी-नालों से आच्छादित है तथा इसका अन्तरातल खनिज रत्नों से भरा हुआ है। अंग्रेजों के शासन से भी पहले यहाँ के वीरों ने विदेशी आक्रमणों से लोहा लेकर अपनी स्वाधीनता को बनाए रखने की जन्मजात उत्कृष्ट अभिलाषा रही है। झारखण्ड के राष्ट्रभक्त-देशभक्त जुझारू वीर-वीरांगनाओं ने कहा था- **"धरती हमारी है, जंगल हमारा है, जल हमारा है, धरती हमारी माता है"**, **"विदेशियों, अंग्रेजों भारत छोड़ो"**। विदेशी शासन, मुगल शासन, ब्रिटिश शासन को जड़ मूल से उखाड़ फेकने में तिलका मांझी, वीर बुद्धु भगत, नीलाम्बर-पीताम्बर, सिद्धो-कान्हु, जतरा टाना भगत, तेलंगा खड़िया, जीतराम बेदिया, बिरसा मुण्डा आदि जनजातीय महापुरूषों का अहम् योगदान है। जिनके शौर्य, पराक्रम और बलिदान की गाथा दुनियाँ में गुंजता रहेगा। इस पुस्तिका में इन महापुरूषों के अलावे सुख-शांति के आर्दश राजा मेदिनी राय, जन-क्रांतिकारी नायक बक्तर साय-मुण्डल सिंह, जनजातीय धर्म-संस्कृति जागरण के पुरोधा कार्तिक उरांव और क्रांतिकारी वीरांगनाएं फूलो और झानों के बारे में संक्षिप्त जानकारी समाज के लिए समर्पित है।

बिरसा मुण्डा



झारखण्ड के उलिहातू गाँव में 15 नवम्बर 1875 में बिरसा मुंडा का जन्म बृहस्पतिवार के दिन हुआ था। इनके पिता सुगना मुण्डा और माँ करमी गरीब किसान थे। उनके बच्चों में कोन्ता, दस्वीर, चम्पा, बिरसा और कानू थे। इनके जन्म के समय ही बुजुर्गों ने कहा धरती का आबा याने पालनहार आ गया। इनका बचपन दूसरे वनवासी बालकों की तरह ही गाय चराते, बांसुरी बजाते बीता। वह बाँसुरी इतनी मधुर बजाता कि पशु-पक्षी भी एकाग्र हो उसकी रागिनी में खो जाते थे। किन्तु इनके पिता इन्हें उच्च शिक्षा दिलाना चाहते थे। प्राईमरी की पढ़ाई के बाद इन्हें अपने रिश्तेदारों के पास आयुबहातू पढ़ने भेजा। उसके बाद आगे पढ़ने ये चाईबासा में जर्मन मिशन के स्कूल में गये। किन्तु यहाँ के पादरी डा. नॉट्रेट की कूटनीति और हिन्दुओं को ईसाई बनाने की उनकी कुटिल चालों को देखकर इनका मन विद्रोह से भर गया। इन्होंने गाय के मांस को परोसे जाने पर आपत्ति उठाई एवं कहा जिनको हम पूजते हैं उनका अपमान नहीं सह सकते। इन्होंने डा. नॉट्रेट से कहा साहब साहब एक टोपी है। चाईबासा से लौटने के बाद बिरसा का पूरा परिवार ईसाईयत से मुँह मोड़ लिया। वो गड़ाबेड़ा गाँव के वैष्णव संत आनन्द पाण्डे का शिष्य बना और रामायण, महाभारत की कथाएँ कंठस्थ कर ली, और फिर पढ़ाई छोड़कर गाँव-गाँव में घूमकर लोगों का उपचार करते हुए वनवासियों को संगठित किया। अपनी संगठित शक्ति के बल पर अनेकों बार अंग्रेजों के दांत खट्टे किये। डुम्बारी की पहाड़ी पर बिरसा के अनुयायियों पर अंग्रेजों ने अंधाधुध गोलियाँ चलाई। यह पहाड़ी खून से नहा गई। पर इन्हें पकड़ नहीं सके। बाद में चालाकी से इन्हें पकड़कर राँची के जेल में डाल दिया जहाँ रहस्यमय स्थितियों में इनकी मृत्यु हो गई। छोटानागपुर में बिरसा भगवान के रूप में पूजे जाते हैं। इनके अनुयायी आज भी सफेद वस्त्र पहनते हैं, सा[illegible] के जीवन जीते हैं एवं बृहस्पतिवार को व्रत रखते हैं। हर बिरसा भक्त के घर के सा[illegible] सी का पौधा एवं सफेद झंडा लगा रहता है।

तिलका मांझी



तिलका मांझी स्वतंत्रता संग्राम के प्रथम स्तम्भ थे। इनका जन्म संताल जनजाति के मुर्मू परिवार में 1750ई. में तिलकपुर ग्राम में हुआ था, जो धुन के पक्के और स्वतंत्रता के परम पुजारी थे। तिलका मांझी ने अपनी दूरदर्शी, मिलनसार कर्मठ और कुशल तीरंदाजी जैसे स्वाभाविक आचरण की विशेषता के कारण अंग्रेजी हुकुमत के खिलाफ स्वतंत्रता आन्दोलन का नेतृत्व किया। तिलका मांझी ने ही सर्वप्रथम संथालों को अंग्रेजों की नीति, उनके और **"फुट डालो राज करो"** की राजनीति की जानकारी दी।

अंग्रेजों के शोषण और दमन के विरोध में तिलका ने भागलपुर के निकट वनचरी जोर नामक स्थान पर विद्रोह शुरू किया। उन्होंने संथालों और अन्य वर्ग के लोगों को संगठित करना शुरू किया जिससे अंग्रेज भयभीत हो गए। फलस्वरूप 1771ई. में वारेन हेस्टिंग्स को मिलिट्री गवर्नर बनाकर भेजा गया। तदोपरांत 1773ई. में एक अंग्रेज युवक अगस्टस क्लीवलैण्ड को अधीक्षक बनाकर राजमहल क्षेत्र में पदस्थापित किया। उस पदाधिकारी ने 9 माह की कार्य अवधि में 40 पहाड़िया ग्राम के सरदारों को अंग्रेजों का समर्थक बना लिया। पहाड़िया लोगों से किसी प्रकार का कर नहीं वसूला जाता था परन्तु बाकी लोगों से कर लिया जाता था। इस कारण सभी वर्गों के लोग तिलका मांझी के साथ सरकार के विरोध में शामिल हो गए।

कर वसूली के विरोध में तिलका मांझी ने जबरदस्त आन्दोलन चलाया। तिलका के विरूद्ध क्लीवलैंड ने 6 अधिकारियों की सहायता से बड़ा अभियान चलाया जो स... नहीं हुआ।

संताली ... बाबा तिलका मांझी ने ब्रिटिश शासन को जड़ से उखाड़ फेकने के लिए ... ी हिन्दू-मुस्लिम जनता को मिलाकर जेहाद छेड़ दिया था। उन्होंने नारा दिया ... - **"धरती हमारी है"**। वे दृढ़ प्रतिज्ञ और तीरंदाज थे। उन्होंने 13 जनवरी ...4ई. को भागलपुर के तत्कालीन जिलाधिकारी अगस्टस

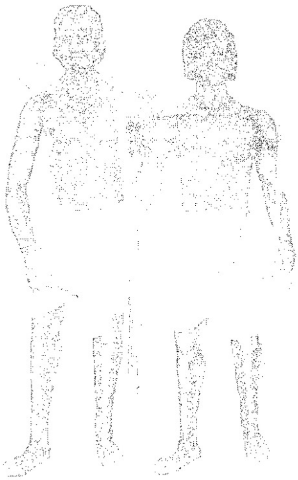
क्लीवलैंड को पेड़ पर चढ़कर तीर मारकर भयंकर रूप से घायल एवं धाराशायी कर दिया। इसके प्रतिशोध में अंग्रेजी शासन ने तिलका मांझी को चारों ओर से घेर कर आक्रमण कर दिया, जिसके कारण तिलका मांझी के कई साथी हताहत हो गए। तिलका मांझी स्वयं इस डाल से उस डाल, इस पेड़ से उस पेड़ पर छलांग लगाते हुए भागने में सफल हो गए। कुछ साथियों के साथ पहाड़ों पर से ही गुरिल्ला युद्ध शुरू कर दिया।

अंग्रेजी शासन के सेनाओं में त्राहिमाम मच गया। तिलका मांझी और उनके साथियों के तीर से अंग्रेज पुलिसों की लाश पट गई। लेकिन संसाधनों की कमी के कारण अंग्रेजी सेना ने चारों तरफ से घेर कर उन्हें पकड़ने में सफल हो गए। तिलका मांझी को बेरहमी के साथ फाँसी पर चढ़ा दिया गया। संताल जनजाति तिलका मांझी को अपने सनातन धर्म-संस्कृति परम्परा के मार्गदर्शक अगुआ और गुरू मानते है। उनके गीत बाबा तिलका मांझी के शौर्य और बलिदानों से अनुप्राणित हैः-

पहली गीत- " मित टिकाक् दो गुरू हो ओत,
रेयाकान गुरू हो ओत रेयाकान,
हाय-हाय बार टिकाक् दो
पेझर हो डंडी रे काम,
चेका हो डंडी रे काम"

दूसरी गीत - " बाबा तिलका मांझीय खाम खुन्तीकाना हो
गाँधी बाबा मुतुल खुन्ती काना।
जाँत मिनु जँत तेदो बाबीन ऐंपेर हेम्डेना हो,
जोतो गे बोन भारतवासी काना।"

सिद्धो-कान्हु



सिद्धो-कान्हु संताल परगना क्षेत्र के महान योद्धा एवं शेर थे। इनका जन्म साहेबगंज जिला के भोगनाडीह ग्राम में 1815ई. में हुआ था। सिद्धो से कान्हु 5 वर्ष छोटे थे। सिद्धो का कद 6 फीट लम्बा था, उनकी शारीरिक बनावट बचपन से ही शक्तिशाली और उसमें अपार संगठन शक्ति की क्षमता थी। इनके पिता का नाम चुन्नु मांझी (मुर्मू) था। सिद्धो-कान्हु, चाँद और भैरो ये चार भाई थे। इनके नेतृत्व को सभी वर्गों के लोग लोहा मानते थे। उन्होंने लोगों को आकर्षित करने के लिए आध्यात्मिक घटनाओं और विचारों का सहारा लिया।

चारो भाईयों ने अंग्रेजी शासन के अत्याचार, शोषण, भ्रष्टाचार और उपेक्षा के विरूद्ध आन्दोलन चलाया, इन्ही सब शोषणों का प्रतिफल ''संताल हुल'' के रूप में प्रकट हुआ। संतालों को एकजुट करने के लिए सिद्धो-कान्हु ने परम्परागत तरीकों को अपनाया। ''दुबिया बाबा'' की धार्मिक भावनाओं से उत्प्रेरित और कम्पनी शासन के विरूद्ध स्वदेशी शासन कायम करने को प्रोत्साहित थे। उन दोनों भाईयों ने घोषणा की थी कि **"मारङ. बुरू" और जोहार ऐरा"** ने उन्हें दर्शन देकर **'अपना राज'** कायम करने का आदेश दिया है। उन लोगों ने यह प्रचार किया कि कुल देवी-देवता से उन्हें आज्ञा मिली है कि अंग्रेजों को खदेड़ा जाय। सिद्धो ने सभी मांझियों से कहा कि साल वृक्ष में कान लगाकर सुने जिससे एक जुटता का संदेश सुनाई देगा। उस साल टहनी का संदेश गाँव-गाँव, घर-घर भेजा गया और यह सचमुच क्रांति का संदेश प्रमाणित हुआ।

30 जून 1855ई. को भोगनाडीह में एक विशाल सभा का आयोजन किया गया जिसमें 10 हजार मांझी लोग उपस्थित थे। इस दिन को **"हुल दिवस"** के रूप में जाना जाता है। सभा में घोषणा किया गया कि **"अंग्रेजों हमारी माटी छोड़ो"**। भोगनाडीह की सभा में सिद्धो को राजा, कान्हु को मंत्री, चाँद को प्रकाशक और भैरो को सेनापति चुना गया। उसी सभा में **"अबुआ राज"** की घोषणा की गई। इसी दिन स्वतंत्रता की चिनगारी फूट पड़ी थी।

भोगनाडीह के उस सभा के बाद बड़हैत के निकट पंचकठिया नामक गाँव में दूसरी सभा आयोजित की गई थी। इस सभा में सुफियागिरि, कम्पनी सरकार के पक्ष में किए जाने के आरोप में एकत्रित भीड़ के लोगों द्वारा उस गाँव के चार-पाँच बंगाली महाजनों की हत्या कर डाली गई थी। उसके बाद से ही उस जन-क्रांति की ज्वाला आस-पास के विभिन्न क्षेत्रों में भभक उठी थी। उस जन-क्रांति के सैनिक लोग कम्पनी सरकार को अपने देश (दामिन-ई-कोह) से उखाड़ फेकने की योजना लेकर आगे बढ़े। जहाँ-जहाँ भी गोरे लोगों की बस्तियाँ या नीलहे साहबों की कोठियाँ थी, वहाँ-वहाँ उन क्रांतिकारियों ने धावा बोला। मार-काट की। उनलोगों का एक नारा था-

"जुमींदार, महाजोन, पुलिस आर राज रेन आमला को गुजुक्मा"

सिद्धो-कान्हु की नीति थी कि जन-क्रांति के सैनिकों की रसद के लिए अपना धन देने में कोई आना-कानी करेंगे तो वे देशद्रोही माने जायेंगे, उनका धन लूट लिया जाएगा और वैसे लोगों को हत्या कर दी जाएगी किन्तु जो लोग अपना धन सहर्ष दे देंगे उन्हें कोई कष्ट नहीं दिया जाएगा।

वीरवर सिद्धो-कान्हु के क्रांतिकारी सैनिकों ने फुदकीपुर गाँव के नीलहे गोरे साहब की कोठी पर हमला करके वहाँ के गोरे साहब को मार डाला और साहेबगंज की ओर चल पड़े। भय से कुछ नीलहे गोरे नाव पर चढ़कर गंगा में हेल गये। भागलपुर के कलक्टर उस समय राजमहल में थे जिसने गोरे साथियों के साथ वहाँ के मुगलकालीन "संगी दालान" में घुसकर अपनी जान बचाई। पाकुड़ के अंग्रेज कर्मचारियों ने आनन-फानन में बचने के लिए 20 फूट घेरेवाला एक 30 फूट ऊँचा **"मारटेलो टावर"** बना डाला था। क्रांतिकारियों ने पाकुड़ राज घरानों, महेशपुर राज घरानों पर हमला किया। राज घराने के लोग इधर-उधर भाग कर अपनी जान बचाई।

मेजर एफ.डब्लू.वारफ के नेतृत्व में 10 जुलाई 1855ई. को अंग्रेजी सेना की टुकड़ी आन्दोलन को दबाने के लिए भेजी गई लेकिन सिद्धो के नेतृत्व ने उन्हें पराजित किया। उन्होंने अम्बर परगना के राजमहल पर हमला कर कब्जा कर लिया। परन्तु अंग्रेजों के जवाबी करवाई के क्रम में संताल क्रांतिकारी पराजित हुए और उनके सैकड़ो साथी मारे गए। चारो भाई भागने में सफल रहे।

जन-क्रांतियों को नियंत्रित करने के लिए भागलपुर में मार्शल लॉ लगाया गया और गिरफ्तारी के लिए कई पुरस्कारों की घोषणा की गई। कुछ दिन बाद वरलाईद की लड़ाई में चाँद और भैरो शहीद हो गए और सिद्धो-कान्हु भी साथियों की धोखा-धड़ी के कारण गिरफ्तार कर लिए गए और 26 जुलाई 1956 को उन्हें फाँसी दे दी गई। जन-क्रांति के याद में आज भी 30 जून को पूरे संताल क्षेत्र में हुल दिवस के रूप में मनाया जाता है।

नीलाम्बर-पीताम्बर



गढ़वा जिला से 65 कि.मी. दूरी पर भण्डरिया प्रखण्ड है। इसी प्रखण्ड में वनांचल की गोद में बसा हुआ गाँव है चेमो सनिया। जब भारत देश में अंगरेजों का शासन यौवनावस्था में प्रवेश कर रहा था, तब इसी गाँव में एक खरवार जनजाति परिवार के घर पर दो बच्चों का जन्म हुआ। माता का नाम सनिया देवी और पिता का नाम चेमो सिंह खरवार था। चेमो सिंह खरवार अपने क्षेत्र के प्रतिष्ठित, सामाजिक एवं समाज के जागरुक अभिभावक के रुप में जाने जाते थे। माताश्री सनिया देवी बहुत ही धार्मिक विचार की थी। दोनों भाई गाँव के बच्चों के साथ धूल-मिट्टी में खेलते-कूदते बड़े होते गए। खेल-खेल में एक दूसरे पर कैसे विजय प्राप्त किया जाय ऐसी कला ये दोनों भाई बताते रहते थे। ये दोनों भी गाँव के बच्चों के साथ गाय बकरी चराते थे। उन्हें कोई भी काम करने के लिए कहा जाता तो वे पूरा करके ही दम लेते थे, ऐसे दृढ़ निश्चयी एवं कर्तव्य के प्रति पक्के थे।

नीलाम्बर-पीताम्बर दोनों भाई देवी कुल (ग्राम देवी, चन्डी, दुर्गा) एवं परभन बाबा के परम् भक्त थे। जब कभी नीलाम्बर-पीताम्बर माता-पिता या गाँव वालों के साथ एक गाँव से दूसरे गाँवों को आया-जाया करते थे तब उन्हें गोरे-गोरे चमड़ी वाले आदमी दिखाई पड़ जाते थे। माता-पिता से पूछने पर पता चला कि विदेश से आए हुए अंग्रेज हैं, ये हमारे देश को गुलाम बनाकर यहां के राजा बनकर राज कर रहे है। चारो तरफ अंगरेजों का ही बोल-बाला था। यह सब देखकर दोनों भाईयों से रहा नहीं गया। दोनों भाईयों ने तय किया कि हम समाज को संगठित कर उचित निर्णय लेंगे। नौजवान साथियों को युद्ध कला सिखाकर अंगरेजों से युद्ध करेंगे और देश को आजाद करके ही दम लेंगे। वे तलवार चलाने, युद्ध करने में पारंगत थे। मई 1857 ई० को पीताम्बर कुछ विशेष कामों से राँची आए हुए थे। उन्हें पता चला कि राँची में अंगरेजों के विरूद्ध उनके सैनिक विद्रोह कर दिए घर आकर उन्होंने बड़े भाई नीलाम्बर को यह समाचार बताया। सब तरफ देशभक्त लोग सावधान होकर संघर्ष की स्थिति में आकर मोर्चा संभाल लिया। संघर्ष शुरू हो गया। इससे अंगरेजों के बीच हाहाकार एवं घामासान मच गया। राँची के सैनिक विद्रोह का प्रभाव पलामू, चतरा पर भी भंयकर रूप से पड़ा। 21 अक्टूबर 1857 ई. को नीलाम्बर-पीताम्बर के नेतृत्व में चैनपुर के जागीरदार ठाकुर रघुवर दयाल सिंह पर आक्रमण कर दिया गया। लेकिन ठाकुर रघुवर दयाल सिंह अपनी रक्षा करने में सफल हो गए। इसके बाद शाहपुर को चारो तरफ से घेर कर आक्रमण किया गया। यहां पर घामासान युद्ध हुआ। यहां के अंगरेज पुलिस अपना जान बचाकर निकल भागा। इसके बाद दूसरे दिन नीलाम्बर-पीताम्बर

भाई हाथ नहीं लगे। अंग्रेजों के पिछलगु पैसा ले लेकर नीलाम्बर-पीताम्बर के लोगों को तंग करना प्रारम्भ कर दिया। खरवार, भोक्ता, चेरो बेरहमी से दमन के शिकार होने लगे। नीलाम्बर-पीताम्बर को पकड़ने वालों को अच्छी बड़ी जागीर देने की घोषणा कर दी गयी। उत्तरी कोयल के किनारे का क्षेत्र, चेमो सनिया, कुटकू, मंडल गांव नीलाम्बर-पीताम्बर का प्रिय अंडा था। उन गांव में कर्नल डाल्टन 13 फरवरी 1858 को आया था और वहीं पूरे 10 दिन यानि 23 फरवरी 1858 तक दल-बल के साथ वहीं डटे रहा। अंग्रेज गांव वालों को तंग करने लगा। नीलाम्बर-पीताम्बर को अपने निर्दोष भाई, बहनों, माताओं को अंगरेजों के हाथों सत्यानाश होते देखकर बहुत बड़ा दुःख हो रहा था। यह दृश्य देख एवं सुनकर सहा नहीं जा रहा था। एक दिन भोज पर रात को एक गुप्त स्थान पर अपने संगे-संबंधियों को बुलाने एवं परिवार के लोगों से भेंट करने की योजना बनायी। देश-द्रोहियों ने इस गुप्त योजना को कर्नल डाल्टन को जाकर बता दिया। सूचना मिलते ही कर्नल डालटन ने अपने सैनिकों से गुप्त स्थानों को चारो तरफ से घेर लेने की आज्ञा दिया। वे सभी से मिलकर हाल समाचार जान रहे थे तभी संगे-संबंधियों से अचानक सूचना मिला कि कर्नल डाल्टन के सैनिक गांव को चारो तरफ से घेरे हुए हैं और हमारे तरफ बढ़ते आ रहे हैं। ये दोनो भाई एवं इनके कुछ सैनिक भी अपना मोर्चा संभाल लिये। देशहित के दीवाने नीलाम्बर-पीताम्बर शेर के समान दहाड़ते हुए, नंगी तलवार भांजते हुए चीते की तरह उछल-उछल कर, बाज की तरह टूट पड़े। अब तक के सभी युद्धों से बड़ा भयंकर लड़ाई छीड़ गयी। अंगरेज सैनिकों पर नीलाम्बर-पीताम्बर के तलवार का मार खाली नहीं जा रहा था। युद्ध स्थल पहाड़ो की जैसी लाशों का ढेर हो गया। अंगरेजों के भारी सैनिकों के सामने नीलाम्बर-पीताम्बर हजारों सैनिकों को मारते-काटते थक चुके थे। अन्ततः अंगरेजों के भारी सेनाओं के सामने शेर के समान दहाड़ने वाले दोनों धरती माँ के ललनवा नीलाम्बर-पीताम्बर लड़ते-लड़ते रणक्षेत्र में गिरफ्तार कर लिये गये। कर्नल डाल्टन ने प्रस्ताव रखा कि तुम दोनों मेरी बात मानों तुम्हें उचित इनाम एवं पद दिया जाएगा। कर्नल डाल्टन के सारे प्रस्ताव को उन्होंने ठुकरा दिया और दोनों भाईयों ने कहा कि कर्नल, कान खोलकर सुन लो **"यह देश वीरो की जननी है, ऐरे-गैरे यह देश नहीं है तुम नीलाम्बर-पीताम्बर को मारोंगे तो इस मिट्टी से हजारों-हजार नीलाम्बर-पीताम्बर पैदा होंगे।** नीलाम्बर-पीताम्बर पर लगाए गए सभी आरोपों की एक रिर्पोट सैकड़ो पृष्ठों की तैयार की गयी। रिर्पोटों का अध्ययन करने के बाद फैसला आया कि इन्हें फाँसी दे दी जाय। 28 मार्च 1858ई. को लेस्लीगंज में बरगद के पेड़ पर दो फाँसी का फँदा लटका दिया गया। दोनों भाई फाँसी को धारती माँ का उपहार मान कर, अपने ग्राम देवता, इष्ट देव का स्मरण कर माथे से धारती माँ का चरणस्पर्श कर, बड़े ही गर्व के साथ दोनों शेर स्वतंत्रता की बेदी पर वीरों की प्रेरणा बनकर फाँसी के फंदे पर झुल कर मुस्कुराते हुए बलिदान हो गये। आज भी लोग लेस्लीगंज के उस फँसियारे बरगद पेड़ और उनके छिपने वाले गुफाओं की पूजा करते हैं।

का दल चेरो राजा से मिलने पलामू किला गए। चेरो राजा ने अपने सभी सैनिकों को रात में बुलाकर एक बहुत बड़ी बैठक की, यही पर उन्होंने सैनिकों को आह्वान करते हुए कहा कि अंग्रेजों के विरूद्ध देश को आजाद करने के लिए संघर्ष शुरू हो गया है। अब हमें कमर कशकर तैयार हो जाना है। देश को आजाद करने के लिए हमारे क्षेत्र का नेतृत्व नीलाम्बर-पीताम्बर कर रहे हैं। हमें उनका साथ देना है। सभी सैनिक नीलाम्बर-पीताम्बर के नेतृत्व में युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया। अंग्रेजों में त्राहिमाम मच गया। नवम्बर 1857ई. का पूरा महीना चतरा, टोरी से लेकर पूरा पलामू अशांत था। इसी माह में ले.ग्राहम 60 सैनिकों के साथ लेस्लीगंज पहुँचा। वह 7 नवम्बर 1857 को चैनपुर में ठाकुर राम दयाल सिंह के यहां आया और वहीं पर डर के मारे चुपचाप पड़ा रहा। उनकी मदद करने के लिए सासाराम से मेजर कोटर ने दो कम्पनी सेना लेकर पहुँचा तब जाकर ले.ग्राहम को मुक्त कराया गया। 27 नवम्बर 1857 को भोक्ता, खरवार, चेरो के एक विशाल समूह ने रजहरा स्टेशन को घेर लिया। चलाकी से ग्रेंडी और मेलजा भाग निकले। 8 दिसम्बर 1857 को ले. ग्राहम की मदद के लिए काफी मात्रा में अंगरेजी सेना आ चुकी थी। इसी बीच शाहपुर में अंग्रेजों और नीलाम्बर-पीताम्बर सेनाओं के बीच घामासान युद्ध शुरू हो गया लेकिन अंगरेजों के भारी सेना के सामने नीलाम्बर-पीताम्बर टीक नहीं सके, वहीं पर देवी बक्सराय गिरफ्तार कर लिये गये।

21 जनवरी 1858ई. को पुनः पलामू किला में अंग्रेजों और नीलाम्बर-पीताम्बर के बीच भयंकर संग्राम छिड़ गया। यहां पर एक तरफ नीलाम्बर-पीताम्बर की सेना तो दूसरी तरफ कर्नल डाल्टन की सेना और ले.ग्राहम की संयुक्त सेना मिलकर लड़ रही थी। दुर्भाग्यवश इस युद्ध के दौरान जगतपाल सिंह खरवार अंगरेजों से जाकर मिल गया, जो देश के साथ भंयकर गद्दारी था। इन कारणों से नीलाम्बर-पीताम्बर को सफलता नहीं मिल पायी। यह युद्ध बहुत ही संघर्षपूर्ण हुआ था। इसी युद्ध में मनिका के टिकैत और ठकुराई भिखारी सिंह खरवार को गिरफ्तार कर लिया गया। इनके माध्यम से अंगरेजों ने नीलाम्बर-पीताम्बर के रणनीतियों के भेदों को जानना चाहा। इन दोनों देशभक्तों ने मरना कबूल किया, लेकिन प्राणों से प्रिय नायक नीलाम्बर-पीताम्बर के भेदों को नहीं बताया। गुस्से में आकर अंगरेजों ने बड़ी बेदर्दी से दोनों वीरों को फाँसी दे दी। ले.ग्राहम को मदद के लिए सरगुजा के प्रमुख ने 600 सैनिको का एक दल भेज दिया इसमें ले.ग्राहम की सैन्य शक्ति काफी मजबूत हो गयी। इन सैनिको के मदद से ले. ग्राहम चतरा के कुन्दा क्षेत्र के हड़कोचा पहाड़ और कुलसरी पहाड़ क्षेत्र में धावा बोला। ये क्षेत्र भी नीलाम्बर-पीताम्बर के प्रमुख अडों में से एक थे। इधर का नेतृत्व उन्होंने देशभक्त कुंदा निवासी इलाकेदार प्रेमानंद को दिया था, चारों तरफ से दोनों स्थानों को घेर लिया गया। काफी समय तक युद्ध चलता रहा। भारी सेना के सामने प्रेमानंद परास्त हो गये और पूरा क्षेत्र ले.ग्राहम के कब्जे में आ गया। इधर कैप्टन डाल्टन ने बड़ी चतुराई से किशन दयाल सिंह खरवार को अपने अधीन कर लिया और उन्हीं के मदद से नीलाम्बर-पीताम्बर को पकड़े के लिए भेजा, लेकिन दोनों

जतरा टाना भगत



जतरा टाना भगत का जन्म वर्त्तमान झारखण्ड प्रांत के गुमला जिलान्तर्गत विशुनपुर प्रखंड के चिंगरी (नवाटोली) नामक गाँव में आश्विन (सितम्बर) महीने की अष्टमी तिथि को 1945 विक्रमी संवत् में हुआ था। उनकी माता का नाम लिबरी तथा पिता का नाम कोडल उरांव था। जतरा टाना भगत की पत्नी का नाम बंधनी था। कालांतर में जतरा टाना भगत के चार पुत्र एवं दो पुत्री हुए, जिनका नाम क्रमशः बुधु, बंधु, सुधू, देशा, बिरसो तथा बुधनी रखा गया। देशा का विवाह पंडरी से हुआ उनको एक बेटा बिसुवा और दो बेटियां हुई। बिसुवा की पत्नी का नाम भुधनिया है, उनके तीन बेटे और एक बेटी है। वर्तमान में बिसुवा का परिवार चिंगरी (नवाटोली) में ही रहता है।

जतरा टाना भगत का बचपन तो साधारण ढंग से ही बीता। लेकिन छोटी उम्र से ही उनका स्वभाव अन्य बालकों से बिल्कुल भिन्न था। जब जतरा टाना भगत बाल्यावस्था से किशोरवस्था में पहुँचा तो उन्हें विद्यालय भेजने की जगह ओझा-शक्ति मति झाड़-फूंक (तंत्र-मंत्र) की विद्या सीखने के लिए निकट के हेसराग ग्राम भेजा जाने लगा, जहां वे गुरू तुरिया से विद्या अर्जन करने लगे। इसी क्रम में एक दिन वह एक पेड़ पर पक्षी का अंडा उतारने के लिए चढ़े तो वह अंडा नीचे गिरकर टूट गया। उसमें भ्रूण दिखाई दिया, जिसे देखकर जतरा को बेहद आत्मग्लानि हुई और वे इसे जीव हत्या का पाप समझकर उसी समय से जीव हत्या न करने का संकल्प कर बैठे। इसी प्रकार सन् 1914 के अप्रैल मास में एक दिन जतरा मति सीखने जाने के क्रम में ही गुरदा कोना पोखर में स्नान करने गए। वहीं स्नान करते समय उन्हें आत्मबोध हुआ। जतरा टाना भगत को पानी के भीतर सर्वशक्तिमान **धर्मेस** (उरांव जनजाति के सर्वोच्च देवता) का साक्षात दर्शन एवं ज्ञान प्राप्त हुआ। फिर उन्होंने पानी से बाहर निकलकर आवाज लगाई:

ताना बाबा ताना भूतनी के ताना
ताना तुन ताना

कासा पीतर मना, दोना पतरी खाना
मांस मदिरा मना, दारू मना
ताना बाबा ताना।

जतरा टाना भगत के मुंह से निकला यह उद्घोष ही आगे चलकर ताना पंथ बना।

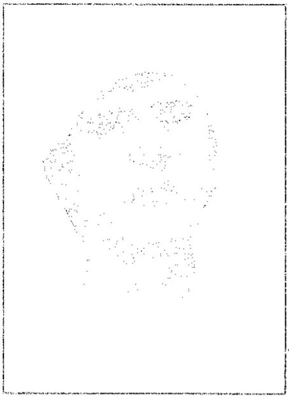
वैष्णव दर्शन के आधार पर धार्मिक, सामाजिक पुर्नरचना का संकल्प लेकर समाज सुधार के आंदोलन का सूत्रपात किया। आगे चलकर यही आंदोलन ताना आंदोलन के नाम से अंग्रेजों के विरूद्ध संघर्ष का शंखनाद करने वाला और बाद में यह युवक जतरा टाना भगत के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

जतरा भगत ने लोगों के बीच अपने ऊपर घटित चमत्कारित घटनाओं का ब्योरा देने के साथ ही मांस न खाने, मदिरापान न करने, पशुबलि रोकने, परोपकारी बनने, यज्ञोपवीत धारण करने, भूत-प्रेत का अस्तित्व न मानने, आंगन में तुलसी चौरा स्थापित करने, गोसेवा करने, जीवहत्या न करने, अंग्रेजों की बेगारी न करने तथा सभी से प्रेम करने का उपदेश देना प्रांरभ किया। फलतः देखते ही देखते उनके अनुयायियों की संख्या में वृद्धि होने लगी और उनके समर्थकों की अच्छी सख्या हो गई। जतरा टाना भगत द्वारा चलाए गए इस नए पंथ का नाम ताना पड़ा और इन्हें अंगीकार करने वाले लोग ताना भगत कहलाए। अहिंसा और असहयोग इस पंथ का मूल मंत्र बन गए।

अब दूर-दराज से उरांव जनजाति के लोग जतरा टाना भगत का प्रवचन सुनने के लिए आने लगे। बृहस्पतिवार को सामूहिक प्रार्थना का दिन निश्चित था तथा उस दिन हल चलाने की मनाही थी। ताना भगतों ने अंग्रेजों को मालगुजारी तथा चौकीदारी टैक्स देना भी बंद कर दिया। इस तरह से गांधीजी के आगमन से पूर्व ही इस क्षेत्र में अहिंसा एवं असहयोग आंदोलन प्रारंभ हो गया। ब्रिटिश सरकार ताना आंदोलन के बढ़ते प्रभाव से थर्रा उठी। अंततः 1916 के प्रारंभ में ब्रिटिश सरकार ने जतरा टाना भगत पर बड़े सुनियोजित ढंग से उत्तेजक विचारों के प्रचार का अभियोग लगाकर उनके सात अनुयायियों सहित उनको गिरफ्तार कर लिया। फिर न्यायालय द्वारा उनको वर्षभर की कड़ी सजा दी गई और जेल में बंद कर खूब प्रताड़ित किया गया। इसका नतीजा यह हुआ कि जेल से बाहर आने के 2-3 माह बाद ही 27 वर्षीय जतरा टाना भगत का देहावसान हो गया।

1920 के बाद भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में ताना भगतों का योगदान उफान पर आ गया, जिसे कदापि विस्मृत नहीं किया जा सकता। मूलतः जनजातियों की देशज संस्कृति की उपज ताना भगत आंदोलन को गांधीजी से भी अधिक गांधीवादी कहा जाता है। सचमुच यह छोटा नागपुर की धरती पर मौलिक अहिंसात्मक असहयोग आंदोलन था।

वीर बुधू भगत



इनका जन्म राँची के सिलागांई गाँव में हुआ था। आप उराँव जनजाति के थे। इनके अंदर ऐसी देवीय प्रतिभा थी कि हजारों उराँव लोग इनके एक आह्वान पर साथ चल देते थे। 1828 ई. में अंग्रेजों के विरुद्ध हथियार उठा लिये थे। जनमानस में इनके नेतृत्व का बहुत प्रभाव था। लोगों को आश्चर्य होता था कि भगत का नाम लो और भगत वहाँ हाजिर। अंग्रेज के लिए भगत आतंक का पर्याय बन चूके थे। भगत मारते-काटते हवा की तरह उड़ जाते, किसी को दिखलाई नहीं पड़ता इस कारण अंग्रेजों ने इन्हें जीवित या मृत पकड़ने का ऐलान किया था। सन् 1832 के जनाक्रोश की ज्वाला समस्त जनजाति प्रदेश में फैल चुकी थी। इसे दबाने के लिए अंग्रेज कैप्टन इम्पे ने अनेकों घुड़सवारों को इन क्षेत्रों में दौड़ा दिया था। 10 फरवरी 1932 को टिक्कू की घाटी का दृश्य हृदयविदारक था। घाटी से 4000 से अधिक ग्रामीण भेड़-बकड़ियों की तरह हाँके जा रहे थे। लेकिन दैवीय प्रभाव से एक भयंकर आँधी तूफान आया और ग्रामीण मुक्त हो गए तथा अंग्रेज बिखर गए। कैप्टन इम्पे पागल हो गया। बुधू भगत को ढूँढ़ने के लिए वीभत्स विनाशलीला की। अंग्रेज सेना के अमानवीय कृत्यों से गाँव में हृदय-विदारक दृश्यों से जनता संज्ञा शून्य हो गई थी। सिलगांई गाँव शाम होते ही लाशों और झोपड़ियों के जलने से आतंकित हो उठा था किन्तु गाँव वालों ने अपने नायक को चारों ओर से घेरकर खुद को गोलियों की बौछारों में झोंककर अपने नायक को निकल जाने दिया। इस कार्य की प्रशंसा अंग्रेज अधिकारियों ने अपनी रिपोर्ट में की थी। सिल्ली बुधू भगत का प्रिय गाँव था। 13 फरवरी 1932 को कैप्टन इम्पे सिल्ली गाँव को चारों ओर से घेर लिया। 300 युवाओं ने प्रिय नेता भगत को बचाने के लिए चारों तरफ से मानव प्राचीर का घेरा खड़ा कर उन्हें बाहर निकाला पर भगत अपने समर्थकों के साथ वीरगति को प्राप्त हो गए। बुधू भगत उनके भाई-भतीजों का शीश काटकर ट्रे में सजाकर पिठौरिया शिविर में कमिश्नर को भेंट किया। इनकी मृत्यु के बाद 1832 का स्वतंत्रता आंदोलन कुचल दिया गया एवं मुंडा-मानकियों जनजातियों को आत्मसमर्पण करना पड़ा।

फूलो-झानों



संथाल परगना देशभक्तों, वीर-वीरांगणाओं, क्रांतिकारियों की ऐतिहासिक जन्मभूमि है। संताल महिलाओं में भी काफी शौर्य एवं पराक्रम की शक्ति भरी पड़ी है। फूलो-झानो दोनों बहनें भी पुरुषों के साथ-साथ अंग्रेजों के चंगुल से देश को आजाद करने के लिए शहीद हो गई। फूलो-झानों रिस्ते में सिद्धो-कान्हु के बहन थी। दोनों बहनें भी अंग्रेजों, जमींदारों के शोषण एवं अत्याचार को देखकर देश की स्वतंत्रता के आन्दोलन में कूद पड़ी। फूलो-झानों दोनों बहनें सिद्धो-कान्हु के नेतृत्व में महिलाओं के बीच जन-क्रांति के जागरण में लगी हुई थी। संताल युवतियों को संगठित कर तलवार, भाला, तीर-धनुष चलाने के लिए प्रशिक्षण देती थी। कुल्हाड़ी से भी दुश्मनों को कैसे परास्त किया जाय, इसमें भी बड़े निपुण थी। दोनों बहनें बहुत ही निडर एवं साहसी थी। सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा का प्रतीक यह जन-क्रांति जनजातियों की अति विशिष्ट जीवन शैली, सामाजिक एकजुटता, धार्मिक जागरण, जनजातीय भावनाओं, जीवन मूल्यों तथा चारित्रिक विशेषताओं का यह एक बहुत ही सनातनीय अनूठा उदाहरण है। 30 जून 1955ई. के क्रांतिकारी सभा में दोनों बहनें बढ़-चढ़ कर हिस्सा ली। सभा में महिलाओं को लाना एवं उनके गाँवों तक वापस जाने की योजनाओं पर इनका विशेष योगदान था। कईक स्थानों पर अंग्रेजों के साथ संघर्ष हुआ लेकिन दोनों बहनें रणकौशल्य के बल पर मारते-काटते निकल जाती थी। अंग्रेज सैनिक दोनों बहनों के पीछे गिरफ्तार करने के लिए लग गया।

दोनों बहनें गुरिल्ला वं छापामार युद्ध करती थी। इन्होंने अंग्रेजी सेनाओं में तबाही मचा दी। दोनों बहनों के साथ सैकड़ो संताली युवतियाँ देश को आजाद करने के लिए दिवानगी हो गई थी। संघर्ष में बहुत सी महिलाएं भी वीरगति प्राप्त की। 1956ई. में वरलाईद में भयंकर स्वतंत्रता संग्राम का संघर्ष हुआ। इसी वरलाईद की लड़ाई में दोनों बहनें फूलो-झानों शहीद हो गई। जिन्दा रहते अंग्रेज इनके शरीर को छू तक नहीं सका। इस प्रकार से दोनों बहनें महिलाओं का आदर्श प्रस्तुत कर देश में इतिहास रच दी।

तेलंगा खड़िया



तेलंगा खड़िया का जन्म गुमला जिले के सिसई थाना के मुर्गू गाँव में 9 फरवरी 1806ई. को हुआ था। उनके पिता ढुईया खड़िया गाँव के पाहन (पुजारी) थे। तेलंगा खड़िया बचपन से ही काफी नटखट और चंचल थे। उनकी माँ पेतो खड़िया उनसे बहुत परेशान रहा करती थीं। वह जिस भी चीज को पाना चाहता, उसे प्राप्त कर के ही रहता था। तेलंगा अपने माता-पिता की देखरेख में बड़े होते गए। अब वे 5 फुट 9 इंच के स्वस्थ्य, वीर और निडर युवक थे। तेलंगा अपने साथियों के साथ प्रतिदिन कसरत, जंगल में तीर-धनुष चलाने, कुश्ती करने, तलवार चलाने और लाठी भांजने तथा गदा-भाला आदि चलाने का अभ्यास किया करते थे। तेलंगा के पिता पाहन होने के साथ-साथ छोटानागपुर के नागवंशी महाराज के भंडारी भी थे। इसलिए गाँव के लोगों पर उनका दबदबा था। उसका लाभ उठाकर तेलंगा ने नवयुवकों का एक संगठन बनाया। जो गाँव वालों को जरूरत पड़ने पर मदद किया करता था। उन्होंने अपने संगठन का विस्तार कर गुमला क्षेत्र के सैकड़ों गाँवों के नवयुवकों को जोड़ लिया था।

वे पिता के साथ कभी-कभी महाराजा के दरबार में जाने के कारण राजाओं, अंग्रेजों और जमींदारों के असलियत को समझने लगे थे। देख रहे थे कि बड़े लोग दूसरों को सताने में लगे हुए हैं। तेलंगा ने 1831-32 के कोल विद्रोह को देखा और भारत के आम लोगों पर अंग्रेजों और जमींदारों के अत्याचार देखकर बहुत पीड़ित हुए। उन्होंने अपने साथियों के साथ संकल्प किया कि इन अंग्रेजों और उनके पिट्ठू जमींदारों को तो सबक सिखाना ही पड़ेगा। तेलंगा ने अपने गुमला क्षेत्र के सभी धर्मों और जाति के लोगों से सम्पर्क कर उन्हें अंग्रेजों के विरूद्ध उठ खड़े होने के लिए प्रेरित किया।

तेलंगा और उनके साथी, गाँव वालों की मदद से अंग्रेज सरकार को परेशान करने लगे। वे लोग छिप-छिप कर अंग्रेज सैनिकों और अधिकारियों पर वार करते और उन्हें मारकर भाग जाते। अंग्रेज पुलिस तेलंगा के पीछे पड़ गई। वह उनके घर पर नजर रखने लगी और परिवार के लोगों को परेशान करने लगी। तेलंगा के परिवार के सभी सदस्यों को एक साथ खड़ा कर दिया जाता है और पुलिस अधिकारी उनपर चाबुक चलाता है। तेलंगा खड़िया अधिक दिनों तक बचकर नहीं रह सके और एक दिन उन्हें बसिया के कुम्हारी गाँव

में साथियों के साथ गिरफ्तार कर लिया गया। तेलंगा की गिरफ्तारी से पूरे क्षेत्र में विद्रोह फैल गया। उसे दबाने के लिए अंग्रेजों ने कड़ी व्यवस्था की। तेलंगा की गिरफ्तारी के साथ शुरू हुआ विद्रोह अंग्रेजों की सख्ती के कारण ज्यादा दिन नहीं चल पाया। परन्तु सावधानी के लिए अंग्रेज सरकार ने तेलंगा को कोलकाता जेल भेज दिया।

तेलंगा खड़िया को कुछ वर्षो के बाद जेल से रिहा कर दिया गया और वे फिर से अपने गाँव आ गए। वहाँ उन्होंने देखा कि स्थिति पहले से भी अधिक बिगड़ गई है। क्योंकि हिन्दुस्तानियों के प्रथम आन्दोलन के विफल होने से अंग्रेज उत्साहित हो गए थे। तेलंगा ने अपने साथियों और समर्थकों का आह्वान किया और अपने युवा संगठन को फिर से जीवित कर लिया। हमें अंग्रेजों को भगाना ही पड़ेगा, हम भारत माता को अंग्रेजों की गुलामी से आजाद करके ही दम लेंगे। चाहे हमारी जान ही क्यों न चली जाए। हम अपनी जान की परवाह नहीं करते, हमें प्राणों से प्रिय अपने देश को आजाद कराना है।

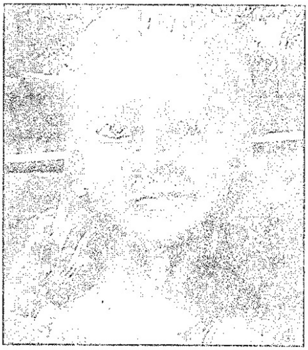
तेलंगा की गतिविधियों की जानकारी अंग्रेजों को होने लगी तो उन्होंने तेलंगा को जान से मार डालने के लिए एक व्यक्ति बोधन सिंह को राजी कर लिया। तेलंगा खड़िया सिसई के अखाड़े में प्रतिदिन अपने समर्थकों को प्रशिक्षण देने के लिए आते थे। बोधन सिंह यह जानता था। वह वहीं पहले से छुपकर बैठ जाता था। प्रशिक्षण प्रारंभ करने के पहले तेलंगा अपने साथियों के साथ अपने ईष्टदेव एवं धरती माँ को प्रार्थना एवं पूजन किया करते थे। एक दिन तेलंगा अपने साथियों के साथ धरती माँ को पूजन कर हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रहे थे तभी देशद्रोही बोधन सिंह ने छिपकर तेलंगा के सीने में दनादन 4-5 गोलियाँ चलाकर छलनी कर दिया।

तेलंगा के साथी प्रार्थना करना छोड़कर दौड़ते हुए तेलंगा के पास पहुँचते है और उन्हें संभालने लगते हैं। तेलंगा ने अपने साथियों से कहा कि मैं अब भारत माता की गोद में समा जा रहा हूँ। अंग्रेज राक्षस के समान भारत माँ के सपूतों, महिलाओं, बहनों को परेशान एवं तंग कर रहा है। वे हमारे देश के मालिक बन बैठे है। अंग्रेजो के हृदय में दया, करूणा नाम की कोई चीज नहीं है। तुमलोग अपने देश को आजाद जरूर कराना .. आह, ओह ..।

वह 23 अप्रैल 1880 का दिन था। तेलंगा वहीं पर तड़प-तडप कर अपनी देश धर्म-संस्कृति के लिए बलिदान हो गए। साथियों के आँखों के आंसू रूक नहीं रहे थे। सभी ने तय किया कि तेलंगा का शव अंग्रेजों के हाथ नहीं लगना चाहिए। हमलोग इन्हें गुमला ले जाएंगे। वहाँ सोसो गाँव के नीमटोली में दफना देंगे। तेलंगा की हत्या की सूचना चारो ओर फैल गई। अंग्रेज खुश हुए और तेलंगा के समर्थक शोक मनाने लगे। शोक सभा में ही सभी ने प्रतिज्ञा किया कि अंग्रेजों से भारत माँ को मुक्त कर के ही रहेंगे।

तेलंगा को जिस स्थान पर दफनाया गया था उसे आज भी लोग तेलंगा तोपा-टांड़ के नाम से जानते हैं। देशभक्त लोग उन्हें श्रद्धांजलि चढ़ाने काफी संख्या में वहाँ आते हैं।

शहीद जीतराम बेदिया



आजादी के संग्राम में अनेकों वीर नायकों ने अपनी जान न्यौछावर करते हुए ब्रिटिश जुल्म और शोषण के खिलाफ लड़ाई लड़ी थी। लेकिन उनमें कई अमर शहीद गुमनाम ही रहे। अमर शहीदों का इतिहास में न लेखन हुआ और न आजादी के पश्चात भी उनकी सूधा ली गई। यहाँ तक कि वर्तमान में भी इतिहास मे जगह नहीं दी जा रही है।

ऐसे ही एक गुमनाम शहीद थे जीतराम बेदिया जिन्होने ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ यहाँ के लोगों को न सिर्फ संगठित किया था बल्कि खुद कई लड़ाईयों का नेतृत्व भी किया था। इनका जन्म राँची के ओरमांझी प्रखंड गगारी गाँव में 30 दिसम्बर, 1802 ई. को हुआ था। इनके पिता जगतनाथ बेदिया भी अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ सक्रिय थे। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात जीतराम बेदिया ने घुम-घुम कर लोगों को संगठित किया और अंग्रेजों के खिलाफ जंग की घोषणा कर दी। उनकी बहादूरी और सांगठनिक क्षमता, सूझ-बूझ से यहाँ की जनता काफी प्रभावित थी और तन-मन से साथ दे रही थी। इससे अंग्रेजी शासन भी घबराने लगा था। अंग्रेजों के खिलाफ देश में जब सन् 1857 ई. को सिपाही विद्रोह हुआ था उस वक्त इस विद्रोह की मशाल इस क्षेत्र में अमर शहीद टिकैत उमरांव सिंह, शेख भीखारी और जीतराम बेदिया ने ही सम्हाल रखी थी। इस विद्रोह को दबाने के लिए ब्रिटिश शासक ने मेजर मेक्डोनाल्ड और मद्रासी फौज को भेज दिया था। मेजर और मद्रासी फौज रामगढ़ में कैम्प किये हुए थी। अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ लड़ने के कारण ही टिकैत उमरांव सिंह, शेख भीखारी और जीतराम बेदिया की एकता बनी थी। मद्रासी फौज के मेजर मेक्डोनाल्ड ने तीनों योद्धाओं को हर हाल में पकड़कर जनता के बीच फांसी पर लटकाने की योजना बनाई थी जब टिकैत उमरांव सिंह और शेख भीखारी को 06 जनवरी को गिरफ्तार करके 08 जनवरी, 1858 को चुटूपालु घाटी में बरगद के पेड़ मे लटका दिया गया। उस समय भी जीतराम बेदिया अंग्रेजों के पकड़ से बाहर थे टिकैत उमरांव सिंह और शेख भीखारी को मुकदमा चलाए बगैर बिना गवाही,

दलील सुने फांसी पर लटका दिया गया तो लोंगों का जनाक्रोश फूट पड़ा। हिन्दु-मुस्लिम सभी समुदाय के लोग चुटूपालु घाटी में हजारों की संख्या में इसे देखने निकल पड़े उसी समय जीतराम बेदिया ने अपनी जोशपूर्ण ललकार से हाथ में तलवार उठाकर मद्रास फौज और उनके मेजर मेक्डोनाल्ड को मार भगाने का आह्वान किया। वहीं मेजर मेक्डोनाल्ड किसी भी तरह जीतराम बेदिया को गिरफ्तार करने अथवा मार डालने के ताक में था। अपनी छापामार युद्ध कला सांगठनिक क्षमता और स्पष्ट वक्ता के कारण जनता जीतराम बेदिया के साथ खड़ी थी। जीतराम बेदिया और उनके लड़ाकू साथियों ने अनेकों बार अंग्रेज सिपाहियों पर हमला बोला था तथा कई बार घुटने टेकने को मजबूर कर दिया था। अमर शहीद जीतराम बेदिया ने गांव-गांव मे घूम-घूम कर यहाँ के लोगों को अंग्रेजी हुकूमत को नकारने और अंग्रेजों के खिलाफ अंतिम दम तक लडने का एलान किया था। 23 अप्रैल, 1858 को गगारी और खटंगा गांव के बीच मेक्डोनाल्ड के मद्रासी फौज और जीतराम बेदिया के लड़ाकू योद्धाओं के साथ घमासान युद्ध हुआ। जीतराम बेदिया ने अंग्रेजो के सामने आत्मसर्मपण करने से साफ इनकार कर दिया था। इस लडाई में मद्रासी फौज भी मारे गये। इसी दौरान मेजर मेक्डोनाल्ड के निर्देशानुसार अन्तत: जीतराम बेदिया को उनके घोडा सहित गोली मार दिया गया। और जीतराम बेदिया के मृत शव और मृत घोडा को बंसैरगढा में गिराकर मिट्टी भर दिया इस घटना के कारण आज उस बंसैरगढा को घोड़ागढ़ा कहा जाता है। बेदिया समुदाय से आने वाले स्वतंत्रता संग्रामी जीतराम बेदिया को इतिहास में आज तक जगह नहीं दिया गया। राज्य सरकार, भारत सरकार और इतिहासकारों ने भी इस अमर यौद्धा के साथ न्याय नही किया है।

सुरेन्द्र कुमार बेदिया, देवकीनन्दन बेदिया
बड़काकाना (रामगढ़)

स्वतंत्रता सेनानी

शहीद बख्तर साय एवं मुंडल सिंह

की संक्षिप्त जीवनी



छोटानागपुर के इतिहास के अनुसार यहाँ बसने वाले राजपूत, भुईयां, खेरवार, चेरो, खड़िया, मुण्डा, भोगता, रौतिया जाति में कई वीर पुरुष पैदा हुए। वे लोग लड़ने भीड़ने साहसिक कार्य करने में आगे थे। वैसे ही शहीद द्वेय बख्तर साय एवं मुंडल सिंह का जन्म सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में रौतिया जाति के जमीन्दार घराने में हुआ था। बख्तर साय का जन्म गुमला जिला के रायडीह प्रखण्ड नवागढ़ के वासुदेव कोना में और मुंडल सिंह का जन्म गुमला जिला के पनारीगढ़ के जमीन्दार घर में हुआ था। दोनों वीरों का लालन-पालन शिक्षा-दीक्षा जमीन्दारी व्यवस्था के अनुसार हुआ। दोनों ही वीर युद्ध कला एवं जमींदारी संभालने में निपुण थे।

समय के अनुसार बख्तर साय एवं मुंडल सिंह अपना-अपना जमींदारी संभाला। उस समय चुटिया नागपुर के महाराजा इन्द्रजीत शाहदेव हुआ करते थे। वे ईस्ट इंडिया कम्पनी अंग्रेजी हुकुमत के अधीन हो चुके थे। उसी समय अंग्रेजों का फरमान महाराजा को मिल चुका था। महाराजा अंग्रेज हुकुम को प्रजा में प्रचारित कर दिया कि सभी रैयतों को जमीन का मालगुजारी अंग्रेज हुकुमत को देना होगा। इस सूचना पर पनारी एवं नवागढ़ परगना के पाहन वैगा पूजार भंडारी महतो एवं परगनैतों का एक बैठक हुआ। बैठक में अंग्रेजी नीति का विरोध करने एवं लगान नहीं देने का निर्णय हुआ। अंग्रेजी हुकुमत के आदेशानुसार महाराजा ने अपने तहसीलदार हिरा राम सिंह को लगान वसुल करने के लिए नवागढ़ भेजा। नवागढ़ के जमींदार बख्तर सय ने तलवार से तहसीलदार का सिर कलम कर अपने नौकरों से सिर महाराजा के पास भेजवा दिया। इधर बख्तर साय कृत्य और हिम्मत की सूचना मुंडल सिंह को मिली उन्होंने भी अपने जमींदारी में सभी रैयतों को ललकारा अंग्रेजों के खिलाफ मोर्चा खोल दिया। लगान नहीं देने और अंग्रेजों के विरुद्ध आंदोलन चारों ओर भड़क गया। बगावत का सूचना अंग्रेजी हुकुमत को मिली अंग्रेजों का नींद हराम हो गया। अंग्रेज बख्तर साय एवं मुंडल सिंह को गिरफ्तार करने का फरमान जारी किया। तत्कालीन लेफ्टीनेंट डोनाल्ड सिपवाही लेकर गिरफ्तार करने गया और

गुमला के बगल सिलम गांव में डेरा डाला और नवागढ़ में हमला बोला। तीन दिनों तक युद्ध हुआ अंग्रेज सिपाही भारी संख्या में हताहत हुए। लेफ्टीनेंट डोनाल्ड जान बचाकर भागा। अंग्रेजों को हार बेइज्जती लगा इसलिए कुछ दिन बाद पूरी तैयारी के साथ दानापुर, गया, मिदनापुर के एक हजार योद्धा सैनिकों को चुनकर तत्कालीन कमान्डेंट आर मार्क इ. रेफ्ररीज के प्रतिनिधित्व में बख्तर साय के विरुद्ध युद्ध के लिए सेना भेजा। इधर मुंडल सिंह भी 500 पहलवानों के साथ बख्तर साय के सहयोग में पहुंचा। भारी युद्ध हुआ, परम्परागत हथियार एवं आधुनिक हथियार के कारण बख्तर साय एवं मुंडल सिंह कमजोर पड़ने लगे तब उन्होंने कुछ पहलवानों के साथ सुरक्षित स्थान गढ़पहाड़ के किले में सुरक्षित रहने लगे इसकी सूचना अंग्रेजों को मिली तो वहाँ भी धावा बोल दिया। शहीद देव पहाड़ के ऊपर बड़ा-बड़ा पत्थर (टूकू) को बुढ़ीलप रस्सी से बांध कर रखे थे एक मात्र रास्ता में जब अंग्रेज सैनिक ऊपर चढ़ते शहीद द्वेय रस्सी काट कर पत्थर नीचे गिरा देते अंग्रेज सिपाही ही पत्थर से पिस कर मरने लगे खून की धारा बहने लगी। अंग्रेज भी पहाड़ पर चढ़ने का हिम्मत नहीं जुटा पाए। जहां पर खुन बहा था आज भी रक्तदोहर है। आज भी देखा जा सकता है।

अंग्रेज कूट-नीति चाल चले बख्तर साय एवं मुंडल सिंह को जिंदा या मुर्दा पकड़ने वाले को दो सौ रुपया इनाम की घोषणा हुई। अंग्रेजों किला में आपूर्ति होने वाले जल श्रोत एवं रसद को रोकने का योजना बनाया। जहां से बांस ढोंधी (पाइप) किले पर जलापूर्ति होता था जल श्रोत पर अंग्रेज गाय काटकर जल को दूषित एवं अपवित्र कर दिया। उसी समय जयपुर महाराजा रंजीत सिंह का संदेश प्राप्त हुआ वे दोनों वीर जयपुर के लिए रवाना हुए। अंग्रेज छल एवं धोखे से 23 मार्च 1812 को बख्तर साय एवं मुंडल सिंह को गिरफ्तार कर लिए। जयपुर से गुमला रोरी चंदवा हजारीबाग होते हुए कलकत्ता पैदल ले जाया गया और दिनांक 04 अप्रैल 1812 को फॉर्ट विलियम कलकता में फांसी दे दिया गया। दोनों वीर शहीद हंसते-हंसते फांसी का फंदा को चून लिए। उस समय वे क्रमश: 40 एवं 42 वर्ष के थे।

दोनों स्वतंत्रता सेनानी को सरकार के द्वारा अभी तक स्वतंत्रता सेनानी घोषित नहीं किया गया है। मूल रूप से 1857 ई. से आजादी की लड़ाई मानी गययी है किन्तु उसके पूर्व भी कई वीर सपूतों ने अंग्रजों के विरुद्ध आजादी की लड़ाई लड़ते-लड़ते प्राण न्योछावर कर दिया है। उन्हें भी स्वतंत्रता सेनानी का दर्जा और मान सम्मान मिलना चाहिए। उनके जीवनी से हमें प्रेरणा लेना चाहिए।

लहरु सिंह
केन्द्रीय प्रवक्ता
अखिल भारतीय रौलिया

फेतल सिंह खरवार

फेतल सिंह का जन्म 7 मई 1885 ई. को गढ़वा जिला के रंका थानान्तर्गत बहाहारा गाँव में हुआ था। उनके पिता लगन सिंह खरवार उस क्षेत्र के अच्छे किसान थे और अपनी पंचायत 'चट्टा' के मुखिया थे। उनके पिता सूर्य के उपासक थे। फेतल सिंह के तीन भाई और एक बहन थी। लगन सिंह के घर में गायें और भैंसे भी थी। इस कारण बच्चों को पर्याप्त दूध मिल जाता था फेतल का शारीरिक और बौद्धिक विकास बड़ी तेजी से हो रहा था। उसके पिता को लग रहा था कि यह पुत्र जरुर कोई बड़ा आदमी बनेगा।

उस समय बहाहारा गाँव के आसपास कोई भी विद्यालय नहीं था। इस कारण फेतल सिंह भी किसी विद्यालय में जाकर विद्याध्ययन नहीं कर पाये। परन्तु गाँव के बुजूर्गों के माध्यम से अनौपचारिक (व्यवहारिक ज्ञान) शिक्षा मिलती रही थी। जब कोई पंडित पूजा-पाठ कराने, सत्यनारायण भगवान की कथा सुनने आते तो वे खूब ध्यान लगाकर सुनते और मौका मिलने पर पंडित जी से कुछ सवाल भी पुछ देते। उनके तर्कपूर्ण एवं तथ्यपूर्ण सवालों को सुनकर पंडित जी भी आश्चर्यचकित रह जाते थे। उनके पिता और दादा यथासम्भव उनकी जिज्ञासा का समाधन करने का प्रयास करते थे। दस वर्ष के होते-होते फेतल सिंह में धार्मिक और सामाजिक ज्ञान का विकास काफी हो गया था। इतनी कम आयु में ही वे खरवार पंचायत की बैठक में कही से छिपकर पूरे पंचायत में होने वाले बहस और फैसला को सुना करते थे। वे कभी-कभी बच्चों के साथ किसी सुनसान स्थान में ले जाकर पंचायत का नाटक किया करते थे। लड़कों को वे अपने माँ और दादी से सुनी चम्पा-केदली, फूलपरी, उड़नपड़ी, भष्मासूर आदि की कहानियाँ सुनाया करते थे। किशोरावस्था में ही उन्होंने देशभक्तों का दल बना लिया था। और उसे विस्तार करता जा रहा था।

अंग्रेजों ने गलत नीति से एक नव अभिजात्य वर्ग के रूप में जमींदार, ठिकेदार, महाजन आदि को पैदाकर उन्हें आम जनता के शोषण और उत्पीड़न का माध्यम बना दिया था। उनके कर्ज धारकों को महाजन और जमींदार "बन्धुवा मजदूर" बनाकर पुस्त-दर-पुस्त उनसे मजदूरी करवाते थे। फेतल सिंह इन अत्याचारों और शोषण की नीति के खिलाफ थे। अब तक फेतल सिंह तीन पुत्रों के पिता बन चूके थे। सरदार आन्दोलन और बिरसा आन्दोलन से भी फेतल सिंह प्रभावित थे। गढ़वा-पलामू क्षेत्र में भी इस आन्दोलन का समर्थन किया गया था। 1920-21 में महात्मा गाँधी द्वारा आयोजित असहयोग आन्दोलन का

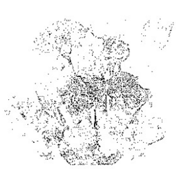
नेतृत्व फेतल सिंह ने अपने क्षेत्र में किया था। प्रशासनिक सुधार के लिए 1927 में साइमन कमिशन बनाया गया था। फेतल सिंह ने इस आन्दोलन को गढ़वा-पलामू में विरोध किया था। नारा दिया था- **"साइमन कमिशन वापस जाओ, ब्रिटिश सरकार मुर्दाबाद, अंग्रेजी अत्याचार नहीं सहेंगे।"** 1936 में सुभाषचन्द्र बोस का आगमन पलामू में हुआ था। उनके जोशिले भाषण सुनने एवं सहयोग के लिए फेतल सिंह भी आए थे। 24 अप्रैल 1936 में ही पं. मदनमोहन मालवीय का भी आगमन मेदिनीनगर में हुआ था, फेतल सिंह उनसे मिलकर काफी प्रभावित हुए।

1942 का अंग्रेजों "भारत छोड़ो आन्दोलन" पलामू-गढ़वा में भी जोर-शोर से शुरु हुआ था जिसका नेतृत्व फेतल सिंह कर रहे थे। इस आन्दोलन से जुड़ने के कारण फेतल सिंह की पहचान एक जुझारू नेता के रूप में हो गई थी। वे महात्मा गाँधी के कट्टर अनुयायी बन गए थे।

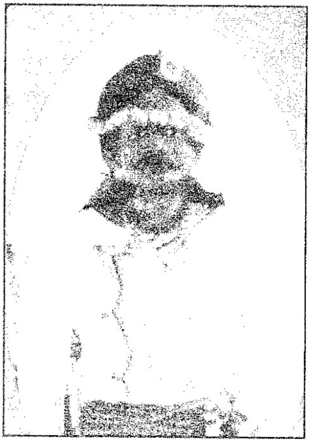
देश आजादी के बाद फेतल सिंह ने दिसम्बर 1957 ई. में खरवार भोक्ता, कोरवा का सुसंगठित दल के साथ बन आन्दोलन प्रारम्भ किया। फेतल सिंह ने लोगों का आह्वान किया कि हमलोग ठीकेदारों को जंगलों से लड़कियाँ नहीं काटने देंगे तथा ठीकेदारों के लिए कोई काम नहीं करेगा। फेतल सिंह के समर्थकों ने बलियागढ़ जंगल के ठीकेदारों तथा श्रमिकों को डरा-धमकाकर वापस जाने को विवश किया। फतल सिंह को वर्तमान शासन की पश्चात्य संस्कृति से प्रभावित पुलिस तथा दण्डाधिकारी स्वीकार्य नहीं था।

स्थानीय अधिकारी जब फेतल सिंह को गिरफ्तार करने पहुँचे तो लगभग 200 व्यक्ति लाठी, भाला, तलवार, टांगी तथा गुलेल से लैस होकर आक्रमण रूख अपनाते हुए आगे न बढ़ने की चेतावनी दी। वहाँ पर काफी संघर्ष हुआ, सरकार के 19 व्यक्ति जख्मी हो गए। बाद में फेतल सिंह गिरफ्तार कर लिए गए। जेल में डाल दिया गया। बाद में फेतल सिंह के अच्छे व्यवहार के कारण बॉण्ड भरकर छोड़ दिया गया। 1976 ई. में फेतल सिंह खरवार का निधन हो गया।

फेतल सिंह खरवार द्वारा चलाया गया वह आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य वनों पर जनजातीय प्रथागत अधिकार की वापसी की।



राजा मेदिनी राय



मेदिनी राय चेरो जनजाति राजाओं में प्रसिद्ध राजा हुए। इनके परदादा शहाबुल राय चैनपुर (पलामू) के राजा थे। उन्होंने ही चैनपुर का किला का निर्माण करवाया था। उस समय भारत के कुछ क्षेत्रों में मुगलों का शासन एवं आक्रमण चल रहा था। मुगल बादशाह जहांगीर ने आक्रमण कर शहाबुल राय को प्राण दण्ड दिया तथा चैनपुर का किला उनसे छिन्न लिया। कुछ महीनों बाद मेदिनी राय के दादा चेरो सरदार भगवंत राय ने जहांगीर पर आक्रमण कर सहज ही विजय हासिल कर ली और पलामू पर अधिकार प्राप्त कर लिया। भगवत राय के बाद अन्नत राय ने शासन किया। तत्पश्चात अनंत राय के पुत्र प्रजाप्रिय राजा मेदिनी राय ने 1662ई. से 1674ई. तक समाज के हित में सफलता पूर्वक शासन किया। मेदिनी राय चेरो राज वंश का सबसे प्रतापी, दबंग, गुणी, प्रजाप्रिय, सर्वहितैषी और कुशल शासक हुआ। मेदिनी राय अपने चतुर्दिक रणकौशल गुणों के बल पर जहांगीर के राज्य काल में दक्षिण गया, हजारीबाग तथा सरगुजा के वृह्द भाग को अपने अधिकार में कर लिया था। इन्होंने छोटानागपुर के राजा की राजधानी डोइसागढ़ पर भी आक्रमण किया था। आज उसे नवरात्रगढ़ कहते है जो राँची से 33 माईल दूर है। पलामू का प्रसिद्ध पुराना किला मेदिनी राय ने ही बनवाया था। पलामू किला छोटानागपुर के ऐतिहासिक स्थलों में से एक है। आज भी यहाँ प्रत्येक वर्ष छठ पर्व के दूसरे दिन मेला लगता है। यह किला मेदिनीनगर से 45 कि.मी. दूर दक्षिण-पूर्व की घनघोर वनों के बीच उत्तरी कोयल और औरंगा नदी के संगम के निकट स्थित है। इनके तट कई महत्वपूर्ण गढ़ों के किनारे से रानियों का विहसना, सखियों का किलकना और ग्रामीण वनवासी युवक-युवतियों को चौकड़ी भरते देख चूके है। उत्तरी कोयल और औरंगा दोनों सहेलियाँ है।

मेदिनी राय के शासन काल में महिलाओं की काफी प्रतिष्ठा थी। महिलाओं

को सम्मान दिया जाता था। महिलाओं पर अत्यचार, शोषण का नाम भी नहीं था। अगर कहीं महिलाओं पर थोड़ा बहुत भी अत्याचार होने का खबर मिलता तो उन्हें कड़ी से कड़ी सजा मिलती थी, जिसके कारण किसी को महिलाओं के साथ छेड़छाड़ करने की हिम्मत नहीं थी। समाज में महिलाओं के प्रति आदर भाव था।

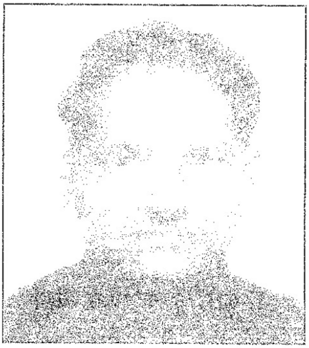
मेदिनी राय के क्षेत्र में मठ, मंदिर, पूजा स्थल संरक्षित एवं सुरक्षित थे। वे गाँवों के पुजारी को काफी इज्जत देते थे। अपने सनातन धर्म-संस्कृति पर भी इनका विशेष ध्यान रहता था। मनुष्य के साथ-साथ पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, जंगल-पहाड़ भी सुरक्षित रहे ऐसा सोच उनका बना रहता था। प्रजा अन्न के अभाव में भूखा न रहे, पानी के अभाव में प्यासा न रहे यह ध्यान वे बराबर रखते थे। अपने प्रजाओं से मिलना प्रायः इनका नित्य का काम था। गाँवों में जड़ी-बूटी के जानकार बैद्यों को प्रोत्साहित करते थे। मेदिनी राय के मंत्री, सेनापति, कर्मचारी भी बराबर घूम-घूम कर प्रजा के सुख-दुःख में भाग लिया करते थे। राजा मेदिनी राय के शासन काल में गो संवर्धन, गो सुरक्षा पर विशेष ध्यान रखा गया था। घर-घर में गो पालन, गो सेवा एवं पूजा की जाती थी। भैंस का भी पालन अच्छा था। गाँवों की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। दूध, मक्खन, दही, घी प्रत्येक परिवरों में उपलब्ध रहता था। राजा मेदिनी राय प्रजा के सुख शांति के आदर्श अभिभावक बन चूके थे।

लोक गीतों में इसका वर्णन हैः-

जहाँ के रहेला मेदिनी राजा,
याद करेला आज भी प्रजा।
ओ घर-घर में बजवले मनहान भाई जी,
जहाँ होला रोज नयका बिहान भाई जी।।

बिहार के सुबेदार अब्दुला खा ने चेरो राजा से मालगुजारी की मांग की थी परन्तु जनजाति चेरो राजा मेदिनी राय ने अपने शासन काल में कभी कर नहीं दिया। मेदिनी राय के बाद प्रताप राय उनका उत्तराधिकारी शासक बना।

डॉ. कार्तिक उराँव



झारखण्ड राज्य के गुमला जिला में सिसई थानान्तर्गत करौंदा नामक गाँव में उराँव जनजाति के बीच 29.10. 1924 को इनका जन्म हुआ। कार्तिक माह में जन्म लेने के कारण इनका नाम कार्तिक रखा गया। प्रारम्भिक शिक्षा पास के गाँव में प्राप्त करते हुए विभिन्न स्थानों पर शिक्षा प्राप्त की। मैट्रिक के पश्चात् अध्यात्म के प्रति रुझान होने पर ये आश्रम में रहने चले गये। तभी फोरी आश्रम में इनकी मुलाकात ठक्कर बापा से हुई, उन्होंने इन्हें उच्च शिक्षा के लिये प्रेरित किया उसके बाद कार्तिक उराँव ने पीछे मुड़कर नहीं देखा, इन्होंने अनेक डिग्रियाँ भारत में प्राप्त की। इसके बाद 1950 में इंजीनियरिंग करने के बाद ये अभियंत्रण विज्ञान में विशिष्टता हासिल करने यू.के. गये। इंग्लैंड में अनेकों डिग्रियाँ प्राप्त करने के पश्चात् नेहरू जी के आग्रह पर 1961 में ये स्वदेश लौटे। विलक्षण प्रतिभा के धनी कार्तिक बाबू ने देश एवं विदेश दोनों ही जगह भारत को गौरव दिलाया। राँची में अधीक्षण अभियंता के पद पर कार्यरत रहकर अपना जीवन मार्ग प्रशस्त किया। नेहरूजी के कहने पर राजनीति में प्रवेश किया एवं 1967 के आम चुनाव में लोकसभा के सदस्य चुने गये। अब वटवृक्ष की भाँति समाज में अपना कार्य प्रारम्भ किया। जीवन के अंतिम क्षणों तक केन्द्र सरकार में नागरिक उडडयन मंत्री के रूप में अपना पद संभाले रहे। इन्होंने वनवासियों एवं दलितों के हित में हमेशा कार्य किया। ये प्रथम श्रेणी के राष्ट्रवादी एवं दार्शनिक थे। इन्होंने जनजातीय कल्याण एवं संगठन हेतु "अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद्" नामक संस्था का गठन किया। केन्द्र सरकार में रहते हुए कार्तिक उराँव ने जनजातियों में धर्मांतरितों को आरक्षण नहीं दिया जाय, ऐसा लिखित प्रतिवेदन तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्द्रा गाँधी को दिया था। इसकी जानकारी के लिए इन्होंने **'बीस बरस की काली रात'** पुस्तक लिखा है जो पढ़ने योग्य है। बालासाहब देशपांडे के साथ ये विचार-विनिमय करते रहते थे। जन जीवन के बीच ज्ञान का दीपक जलाने वाले इस महान कर्मयोगी का अवसान 8 दिसम्बर 1981 को हो गया। आज कार्तिक उराँव को सम्पूर्ण क्षेत्र में लोग याद करते हैं तथा उनके बताए मार्ग से जनजातियों की अस्मिता की रक्षा हो सकती है।

प्रकाशक :-
वनवासी कल्याण केन्द्र
32, आरोग्य भवन - 1
बरियातु रोड, राँची (झारखण्ड)
पिन - 834009
दूरभाष - 0651-2540594, 0651-2541360
ई-मेल : vanvasi@hotmail.com

मुद्रक :-
श्रेया ऑफसेट इण्डस्ट्रीज
प्रथम तल, श्री दुर्गा टॉवर
थरपखना, राँची-834001
दूरभाष : 0651-2210836
वेबसाईट : www.shreyaoffset.com

वनवासी कल्याण केन्द्र, झारखंड